अष्टश्लोकी रामायण

हिन्दी-पद्यानुवाद

सहित ।
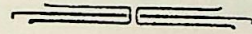
रचयिताः-

पं० नित्यानन्द शास्त्री दाधीच

वि० सं० २०१५
रामनवमी

मूल्य
नित्य-पठन
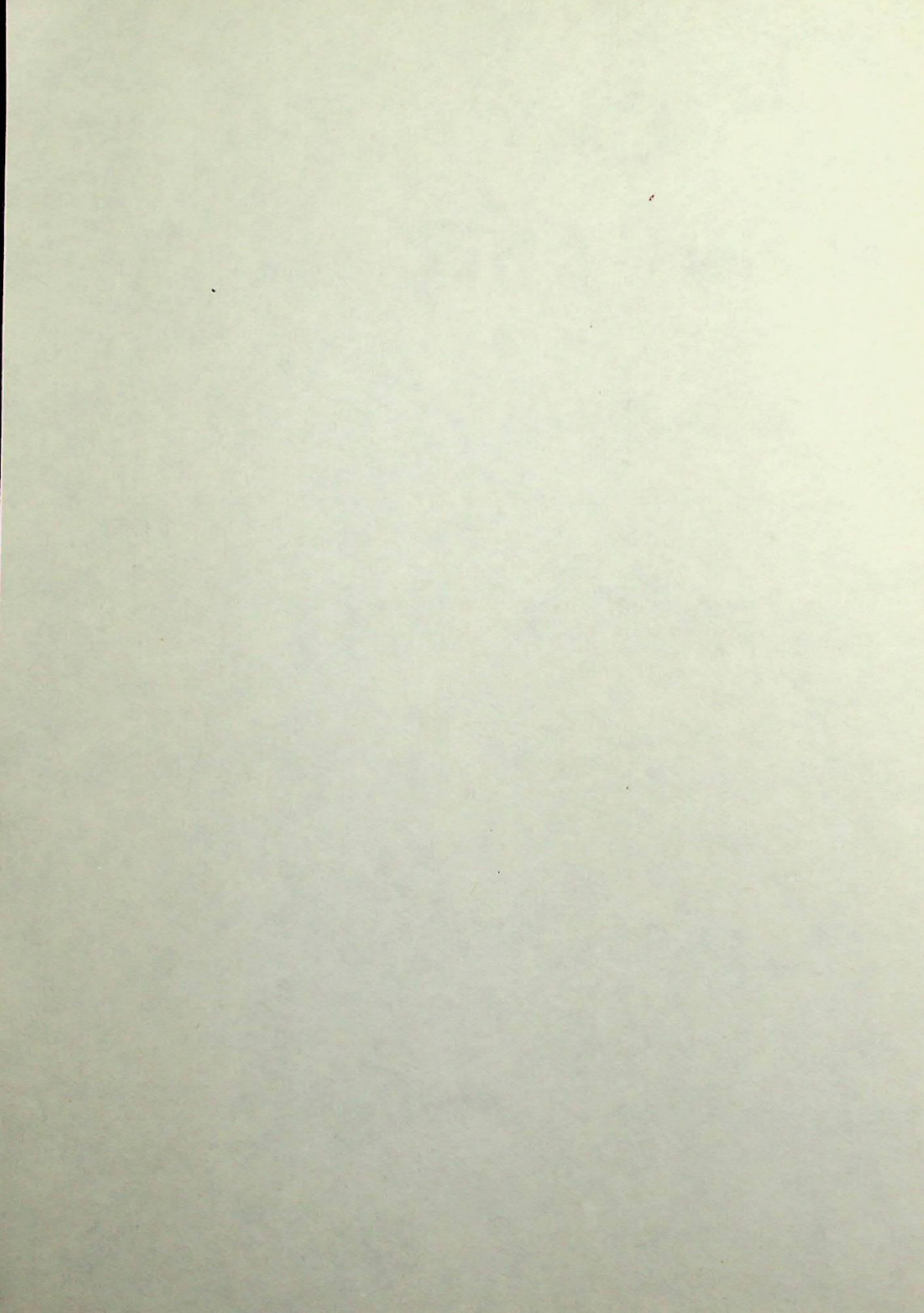
श्रीरामः सर्वमङ्गलम् ।

कर्ता का नम्र निवेदन ।

भगवान् श्रीराम ने शरणागत-रक्षा के लिए जो प्रतिज्ञा की थी, उसका चित्रण महर्षि वाल्मीकि ने अपनी रामायण के युद्धकाण्ड में बड़ा हृदयाकर्षक किया है; जिसे अनूठा समझते हुए महर्षि वेदव्यासजी ने भी अपनी अध्यात्मरामायण के उसी काण्ड में ज्यों-का-त्यों अपनाया है । देखिए:—

सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते ।
अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम ॥

स. श्लो. वा. रा. यु. १८–३३ अ. रा. यु. ३–१२

(भावानुवाद)

'तेरा हूँ' यों सरन आ जाचे कोई जीव ।
मैं उसको देता अभय यह व्रत मम सुग्रीव ॥

चरणों के प्रथमाक्षरों में इन्हें दिखाते हुए मैंने भावानुवाद—सहित यह अष्टश्लोकी—रामायण रचकर भगवद्—भक्तों की सेवा में उपस्थित की है। आशा है, इसका सदुपयोग करते हुए वे लाभ उठायेंगे।

—नित्यानन्द शास्त्री दाधीच।

ओंकार रूपाय समग्रचन्द्रा
ननाय लोकत्रितयेश्वराय।
मोघेतराङ्घ्रि–स्मरण–प्रमाणा
नारायणायास्तु नतिः पराय॥

॥ श्रीराम: सर्वमङ्गलम् ॥

अष्टश्लोकी-रामायणम्

सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते ।
अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम ॥

बा० यु० १८-३३/अध्या० यु० ३-१२

दोहा:-'तेरा हूँ' यों सरन आ जाचे कोई जीव ।
मैं उसको देता अभय यह व्रत मम सुग्रीव ! ॥१॥

सच्चित्परानन्दमयो रमेशः
कृपानिधी रावणमुख्य-हत्यै ।
देवैः स्तुतोऽस्यां भुवि रामनाम्नाऽ-
वतीर्ण आर्यानवितुं च धर्मम् ॥ १ ॥

हिन्दी-पद्यानुवाद

तेजस्वी देवों की स्तुति सुन विष्णु सच्चिदानन्द-स्वरूप,
राम नाम से पुण्य-भूमि में प्रकटे धर अवतार अनूप ।
हूँडा-हूँडी रचते रावण आदि राक्षसों का क्षय-कर्म,
यों फिर 'त्राहि' मचाते जन की रक्षा से रचना था धर्म ॥१॥

प्रह्वः किशोरः पितुराकुलोत्त्याऽऽ-
पन्नेन गत्वा सह कौशिकेन।
नाशं नयन् सावरजो निशाटान्
यज्ञं तदीयं प्ररक्ष रामः ॥ २ ॥

सरल किशोर सुनम्र, पिता का आकुल भी पाकर आदेश,
रघुवर सानुज आश्रित विश्वामित्र-संग जा वन–प्रदेश।
नर–भक्षक यज्ञान्तक राक्षस–सेना का करते संहार–
आर्ष यज्ञ-रक्षा के कारण बने; खुला तब धर्म-द्वार ॥२॥

ततो मुनिस्त्रीं स्फुटयन् पदा शिलां
वास्त्वादि–रम्यां मिथिलां ददर्श सः।
मीमांसमानेषु बलं च राजसु
तिष्ठन् निमेषं शिवचापमाभनक् ॥ ३ ॥

जाते हुए वहाँ से, पद से छूकर शिला अहल्योद्धार–
चेष्टा को दिखला कर प्रभु ने देखी मिथिला सुगृह-प्रकार।
कोई अपने, कई राम के शौर्य जाँचते रहे बड़े,
ईश-धनुष को तभी उन्होंने तोड़ा; एक निमेष खड़े ॥३॥

चकोरनेत्रा परमेकमित्रा
या प्राग् यमैषीदिह[१] जानकी सा ।
चकोरनेत्रा परमे कमित्रा
तेनोपयेमे ऽह्नि रघूत्तमेन ॥ ४ ॥

जीवन-मित्र एक जो रखती जिन्हें पूर्व अति चाह चुकी ।
वह भी इच्छुक चतुरशिरोमणि समझे, मुझे सराह चुकी ।
मैके में ही उन सीता को ब्याह लिया तब रघुवर ने,
उस सुदिनीय विवाहोत्सव की महिमा को कवि क्या बरने।४।

अङ्गीकृतं प्राग् वरमाप्य कैकयी
भर्त्रा वनं गन्तुमशात् सुताग्रजम् ।
यं यौवराज्यार्थमसज्जयत् पिता,
सर्पो विधिश्च स्त उभौ हि जिह्मगौ ॥ ५ ॥

सज्ज किया जिस सुत को नृप ने यौवराज्य-पद को पाने,
कोपित उसे कैकयी बोली, पति को बना विपिन जाने ।
देना था नृप को थाती वर, माँगा था उसने तब ही,
तारतम्य क्या साँप व विधि में, दोनों हों चट कुटिल कहीं ।५।

१ मिथिलायाम् ।

वने खरादौ निहते, दशास्यो
भूत्वा समायो हरति स्म सीताम् ।
तेभ्यो निरैत् तत् स तु दण्डकेभ्यो
योग्यां सुकण्ठेन तथाऽऽप मैत्रीम् ॥ ६ ॥

अब अरण्य में खरादि राक्षस रघुवर ने ज्यों ही मारे,
भरसक माया कर रावण ने हरी जानकी छल धारे ।
यह दण्डक वन छोड़ यहां से चले राम फिर भी आगे,
यथायोग्य सुग्रीव-आर्त को मित्र किया, आश्रय माँगे॥६॥

दण्डं ददेऽधार्मिक-वालिने, स्रग्-
दाम्नाऽभिषेकस्य सुकण्ठमार्चत् ।
येते हनूमाञ्जनकात्मजाप्त्यै
तद्-वृत्तमाख्यादुभयोः कृतार्थः ॥ ७ ॥

हठी दुराचारी बाली को प्राणदण्ड का पात्र किया,
व्रत धारी सुग्रीव-मित्र को तब ही उसका राज्य दिया ।
तन-मन से हनुमान जुटे फिर, सकुशल सीता को पाया,
मधुरामृत उन दंपतियों की कर्णाञ्जलि में टपकाया ॥७॥

व्रती दशास्यं स जघान, तत्पदं
तं भक्तमानेष्ट, य आश्रितः पुरा ।
मन्त्राभिषिक्तो रघुराट् स सीतया
मनोरथान् राज्यमथाप्य पूर्णवान् ॥ ८ ॥

मर्यादापुरुषोत्तम प्रभु ने उस मदान्ध रावण को मार,
सुहृद विभीषण को दे उसका सारा राज्य निभाया प्यार ।
ग्रीवा में वनमाल, मुकुट शिर, पा मन्त्रों से नृपाभिषेक,
वही राज्य पा सीतापति ने किये मनोरथ पूर्ण अनेक ॥८॥
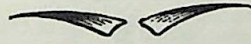
अष्टश्लोकी-रामायणमिति पद्यानुवाद संवलितम् ।
रामाश्रयार्थ-सिद्ध्यै नित्यानन्देन शास्त्रिणा रचितम् ॥

मुद्रकः—उदय आर्ट प्रिंटिंग प्रेस, जोधपुर.